Inspira- Journal of Modern Management & Entrepreneurship (JMME)
ISSN : 2231–167X, Impact Factor: 6.889, Volume 12, No. 03, July-September 2022, pp. 24-26

आदिवासी समाज व संस्कृति की वर्तमान स्थितिः एक अध्ययन

मोहम्मद रमजान*

सार

प्रस्तुत मेरे शोध पत्र के माध्यम से जनजातीय समाज को किस प्रकार से भारत में एक किनारे पर लाकर खड़ा कर दिया गया है इसी वजह से इस पर विचार–विमर्श करना बहुत जरूरी सा हो गया। आदिवासी समुदाय को आगें लाने के लिए इन पर चिन्तन–मनन करने की आवश्यकता आ पड़ी है। भारत वर्ष के आजाद होने के बाद अधिकतर जनजातीय समाज विस्थापन की मार आज भी झेल रहे भूमि पुत्रों के प्रति न राज्य सरकार व न ही केन्द्र सरकार ने विकास या पुर्नवासन के लिए ठोस कदम उठाये हैं।

शब्दकोश : *जनजातीय समाज, संस्कृति, आदिवासी समुदाय, चिन्तन–मनन, केन्द्र सरकार।*

Introduction

भारत में आदिवासी शब्द का प्रयोग उन के लिए किया जाता है। जिनका इतिहास से बहुत पुराना सम्बंध हो। आदिवासी लोग संस्कृति के प्राथमिक धरातल पर जीवनयापन करते है। आदिवासी समाज को भारतीय सविद्यान में पांचवी अनुसूची में अनूसुचित जनजातियों के रुप में मान्यता दी गई है। भारत के आजादी ने अमृत महोत्सव लगभग 75 वर्ष बाद भी भारत वर्ष में जनजातीय समाज तिरस्कृत, शोषित होते हुए पीड़ित नजर आ रहे हैं। राजनीतिक दल भी किसी भी पार्टी (सरकार) ने न तो अपने घोषणा–पत्र में आदिवासियों की समस्याओं को उठाया और न ही कभी चुनाव अभियान में उनके हित के बारे में बात की। जनजातीय समाज किसी भी एक राज्य या क्षेत्र विशेष में नहीं बल्कि पूरे भारत वर्ष में फैले हुए हैं। इस समाज को स्वतन्त्र भारत में सबसे अधिक वेदना झेलनी पड़ रही हैं। आज भी भारत में जनजातीय समाज नहीं पर नकसलवाद की आग में जल रहे हैं तो कहीं पर अलगाववाद से जूझ रहे हैं। यह समाज जमीन, जल और जंगल आदि से लगभग 8 करोड़ जनजातीय समाज की आबादी को वर्तमान में भी राजनीतिक पार्टियाँ केवल अपने वोट बैंक को बनाये रखने के लिए एक झूठी परम्परा कायम किये हुए है। अंग्रेजों के द्वारा जनजातीय समाज पर जितना अत्याचार किया गया या वो यथास्थिति से भी अधिक वर्तमान समय में बना हुआ है। जनजातीय समाज में ऊपर हा रहे अत्याचारों को भारत सरकार खत्म करने में कोई उपाय आज तक नहीं सुझा पाई है और न ही सुझाने की कोशिश कर रही है। जनजातीय समाज को इस तरह नजर अंदाज करने सरकार नक्सलवाद को पनपने के लिए प्रदेश की सरज़मी को खतरे में डाल रही है।

यह जनजातीय समाज देश के विभिन्न स्थानों जैसे :– घने जंगलों, पहाड़ों आदि पर रहते हुए देश के अन्य नागरिकों की अपेक्षा भौतिक सुख–सुविधाओं तथा आधुनिक प्रगति से दूर, पहले से भी बदतर जिंदगी जीने के लिए अपमान और यातना झेल रहा है। न जाने ये कौसी मजबूरी है जिसके चलते आज भी इस समाज को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास नहीं किया? आज के वैश्वीकरण बाजारीकरण, निजीकरण, सूचना और प्रौद्योगिकी, उत्तर आधुनिकता, तकनीकी और आधुनिकीकरण के इस युग में यदि कोई समाज विकास की धारा से जुड़ नहीं पाया तो वह जनजातीय समाज ही है। यह समाज आज भी भारत में सबसे अधिक पिछड़ा और उपेक्षित हैं। इस समाज का शोषण सरकारी कर्मचारी, महाजन, पूँजीपति तथा अधिकारी व पुलिस कर्मचारी करते आ रहे हैं।

* शोधार्थी, विषय चित्रकला, गोविन्द गुरू जनजातीय, विश्वविद्यालय, बाँसवाड़ा, राजस्थान।

भारत देश के छोटे–छोटे विभिन्न राज्यों जैसे – मिजोरम, नागालैंड, मेघालय आदि में 80 से 92 प्रतिशत तक आबादी जनजातीय समाज की है। बड़े राज्यों जैसे – मध्यप्रदेश, उड़ीसा, बिहार, झारखण्ड, गुजरात, राजस्थान, छत्तीसगढ़ आदि में इस समाज की आबादी 8 प्रतिशत से लेकर मात्र 23 प्रतिशत तक हैं। सम्पूर्ण भारत की 8.6 प्रति ात जनसंख्या आदिवासी समुदाय की है।

भारत सरकार द्वारा हमेशा ही उपेक्षित और वर्तमान समय में भूमंडलीय पूंजी के विस्तार एवं बाजारवाद के चलते जनजातीय समाज आज कहीं नक्सलवाद तो कहीं अलगाववाद का शिकार समय–समय पर होता रहा हैं। बाजारवाद और अमेरिकी विकास माडल का आगमन, विस्थापन, औद्योगीकरण के नाम पर विस्थापन, जल परियोजनाओं के कारण, सुरक्षा परियोजनाओं के नाम पर विस्थापन, जंगल को सुरक्षित करने का नाटक रच कर जनजातीय समाज को विस्थापित करने की रणनीति आज भी बनी हुई है। केन्द्र एवं राज्य दोनों ही सरकारों ने इस समाज को उनके परम्परागत अधिकारों से वंचित करने की हर कोशिश को कायम रखा है।

आज भी वर्तमान समय के आलोचक, सम्पादक, विमर्शकार जिस प्रकार स्त्री–विमर्श, दलित–विमर्श एवं अल्पसंख्यकों की समस्याओं को साहित्य की मुख्यधारा में लाने के लिए तत्पर दिखाई देते है अगर उसकी एक चौथाई कोशिश भी वे जनजातीय समाज की समस्याओं पर कलम चलाये तो इस समाज को देश में एक किनारे पर जाना नहीं पड़ता। बड़े ही शर्म की बात है कि इस देश में सबसे अधिक संख्या में बोली एवं समझी जाने वाली भाषा हिन्दी के लेखकों, आलोचकों, सम्पादकों ने भी जनजातीय समाज को सदा दरकिनार किया है।

सन् 1952 में देवेन्द्र सत्पथी का 'रथ के पहिए' जनजातीय समाज पर लिखा गया पहला उपन्यास है जिसमें M.P. की गोंड जनजातीय की गाथा है। यह उपन्यास पढ़ने के बाद पता चलता है कि आज भी किस तरह जनजातीय समाज उपेक्षित है। यह उपन्यास जनजातीयों के जीवन और लोकाचारों की इतनी जिन्दा और प्रमाणिक तस्वीर पेश करता है कि आँख से आँसू गिरने लगते हैं।

सन् 1990 के बाद के समकालीन कुछ लेखक हिन्छी उपन्यासों में खासकर गैर जनजातीय लेखकों का झुकाव जनजातीय समाज, संस्कृति और उनकी समस्याओं को केन्द्र में रखकर हिन्दी भाषा के लेखकों ने जनजातीय समाज की समस्याओं को लेकर सजग हुए। समकालीन हिन्दी उपन्यासों में जनजातीय जीवन की व्यथा–पीड़ा, उत्पीड़न, शोषण, संघर्ष, त्याग, योगदान तथा इस समाज की वर्तमान समस्याओं, इनकी दयनीय हालत को संवेदना के साथ अभिव्यक्ति मिली है।

समकालीन जनजातीय समाज के जीवन पर आधारित हिन्दी उपन्यासों में 'पाँव तल की दूब', 'जहाँ बाँस फूलते हैं', 'पठहार पर कोहरा', 'जंगल के आसपास', 'भारत बनाम इंडिया, 'जो इतिहास में नहीं है', 'काला पहाड़', 'ग्लोबल गाँव के देवता', 'रह गयी दिशाएँ', 'इसी पार', 'मौसी', 'गायब होता दश', 'सु–राज', 'जंगल जहाँ से शुरू होता है', 'समर शेष है', 'आत्मा कबूतरी', 'डूब', 'वनतेरी सहराना', 'रेत' आदि उल्लेखनीय है।

उपरोक्त उपन्यासों में उपन्यासकारों ने यह बताने की कोशिश की है कि किस प्रकार बाजारवादी नीति अमरीकी विकास मॉडल ने बचे हुए जनजातीय समाज को एक किनारे पर लाकर खड़ा कर दिया है। उपन्यास 'काला पादरी' उपन्यास में उपन्यासकार ने लिखा है कि किस प्रकार M.P. के महेशपुर जैसे असंख्य गाँवों में धर्म परिवर्तन करने वाले जनजातीयों के ऊपर किस प्रकार से अत्याचार हो रहे हैं, इस उपन्यास पर अपना मत जाहिर करते हुए उदय प्रकाश कहते हैं – ''मध्य प्रदेश के गहन जनजातीय क्षेत्रों में घटित होती घटनाओं और जंगलों के पास साँस लेते जीवन का इतना गहन विवरणात्मक, संवेदनशील और सूक्ष्म आकलन समकालीन कथा साहित्य की एक विरल उपलब्धि है।''

मध्य प्रदेश में जनजातीय समाज की हालत बड़ी ही दर्दनाक नजर आती है। कहीं भूख से गरीबी के चलते इनकी मौत हो जाती है। 'काला पादरी' उपन्यास में यह बताया गया है कि ''यह समाज पिछले कई दिनों से जहरीली जंगली बूटियाँ खा रहे है और जिले के भीतरी इलाके में कुछ लोग अपनी भूख मिटाने के लिए बिल्लियाँ और बंदरों का शिकार करके उनका माँस तक खा रहे है।''

प्रस्तुत उपन्यास में हम देखते हैं कि चर्च, राजनेता, मुख्यमंत्री सभी केवल जनजातीय समाज को ठगते हैं।

धार उपन्यास में किस प्रकार भारत के आदिवासी समाज को जनजातीय समाज से अभिहित किया गया है और हिन्दू धर्म के समर्थकों ने उन्हें वनवासी होने की संज्ञा दी है। किस प्रकार जनजातीय समाज को किनारे पर ले जाने के लिए एक नयी नीति को अपनाया गया है। विकास के लिए 'सावधान नीचे आग है।' में कोयला खदानों में मजदूरी करने वाले जनजातीयों के संघर्षशील भयावह, असुरक्षित, शोषित जीवन को चित्रित किया है।

'जंगल जहाँ से शुरू होता है' में संजीव ने बिहार के चम्पारण जिले की राजनीति जनजाति को केन्द्र में रखकर उनको किस प्रकार समाज तिरस्कृत कर रहा है, लड़कियों को बेचने तक के लिए किस प्रकार मजबूर कर रहा है, इन सारे हालातों का वर्णन किया है। आखिर जनजातीय डाकू क्यों बना। ''पहले चीनी मिल बंद हुई, फिर खेत बंधक हुए, मेहरारू मरन सेज पर और बेटी को साँप ने डँसा। मकान कहाँ, जमीन गई, कहाँ जायँ, क्या खायँ, कहाँ रहें, हक की कमाई मांगने पर ठेकेदार के पास पैसे नहीं है। क्या वह इन हरामखोरों के यहाँ बेगार करने के लिए पैदा हुआ है। डाकुओं के निर्माण में यही भूमिका है, फिर ये आते हैं जमींदारों के पास, मिल के सेठों के पास। जबरन वसूली, बलात्कार, दमन इनकी ट्रेनिंग नहीं मिलती है। कुछ दिन बाद ये स्वतंत्र रूप से खुद के लिए यही करते है और डकैत बन जाते हैं। नाम कर गये, प्रभाव क्षेत्र का विस्तार हो गया तो मंत्री लोगों के काम करने लगते है – जबरन चंदा वसूली, पार्टी फण्ड, बूथ कैप्चरिंग, लठौती।''

कहने को तो भारत सरकार इन आदिवासियों के लिए बहुत सारी सरकारी योजनाएँ चला रखी है। लेकिन इन योजनाओं का लाभ इस समाज के लोगो को पूर्ण रुप से नही मिल रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वनवासी कल्याण परिषद,जालन्धर
2. पांव तले की दूब हंस सितम्बर 1996
3. भारत के मूल निवासी और आर्य आक्रमण, स्वपन कु, बिस्वास
4. भारत की अनुसूचित जातिया जनजातियां एवं पिछडी जातियां, सतनाम सिंह
5. भारत की आदिवासी नाग सभ्यता, डॉ नवल वियोगी
6. बिस्सा मुण्डा सचित्र जीवनी, खुशाल चन्द्र मेश्राम

पत्रिकाएँ

7. जेहर सहिया
8. जेहर दिसुम खबर
9. अखडा

♦❐♦